शोध मंथन Vol. XIII No.IV Oct.-Dec. 2022 ISSN: (P) 0976-5255 (e) 2454-339X
Available at: *http:/shodhmanthan.anubooks.com*

भक्तिकाल में कृष्ण काव्यधारा की प्रमुख प्रवृत्तियाँ

प्राप्तिः 13.12.2022
स्वीकृतः 24.12.2022

87

डॉ० कामना कौशिक
विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग
सी०एम०के० नेशनल पी०जी० गर्ल्स महाविद्यालय, सिरसा
ईमेलः *kamnacmk78@gmail.com*

हिन्दी साहित्य के इतिहास में भक्तिकाल का समय सम्वत् 1375–1700 तक है। भक्तिकालीन हिन्दी काव्य धारा को चार शाखाओं में विभाजित किया गया है राम काव्य, कृष्ण काव्य, सन्तकाव्य और सूफी काव्य। सगुण भक्तिधारा में कृष्ण भक्ति काव्यधारा का प्रमुख स्थान है। इस काव्यधारा में स्वामी वल्लभाचार्य एवं उनके शिष्यों का महत्वपूर्ण योगदान है। भक्ति काल को विभिन्न नामों से जाना जाता है यथा स्वर्णकाल, स्वर्णयुग, लोकजागरण काल और भक्तिकाल। भक्तिकाल में कृष्ण काव्य का विकास वैविध्यपूर्ण है। प्रारंभिक रूप में देवता, महाभारत युग में परमदेव, श्रीमद् भगवद् गीता में पूर्ण ब्रह्म, पौराणिक युग में भगवान, मध्यकाल में भक्तिरस के आलम्बन बने तो रीतिकाल में श्रृंगारी नायक तथा आधुनिक काल में लोकहित रक्षक, राष्ट्र–उद्धारक एवं राष्ट्र संरक्षक रूप में प्रस्तुत हुए। इस प्रकार विभिन्न कालों में विभिन्न रूपों में कृष्णकाव्य की परम्परा विकसित होती रही। सगुण भक्तिधारा में कृष्ण भक्त काव्यधारा का प्रमुख स्थान है। इस काव्यधारा में स्वामी वल्लभाचार्य और उनके शिष्यों का महत्वपूर्ण योगदान है। भक्तिकाल में वल्लभाचार्य और इनके पुत्र गोस्वामी विट्ठठलनाथ ने कृष्णभक्ति के प्रचार–प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान दिया। महाप्रभु वल्लभाचार्य ने पुष्टि–मार्ग की स्थापना कर कृष्ण भक्ति की उपासना का प्रचार–प्रसार किया। अष्टछाप के सुप्रसिद्ध कवियों ने वल्लभाचार्य के उपदेशों को अपनी कविताओं में प्रतिबिम्बत कर कृष्ण की लीलाओं का गान किया। कृष्ण काव्यधारा में सूरदास का नाम विशेष उल्लेखनीय है। कृष्ण काव्य में समरसता और प्राणों का जितना गहरा संचार सूरदास ने किया उतना किसी ओर ने नहीं किया। अष्टछाप के अन्य कवि कुम्भनदास, परमानन्ददास, कृष्णदास, नन्ददास, गोविन्दस्वामी, छीतस्वामी, चतुर्भुजदास आदि ने कृष्ण भक्ति के प्रचार–प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इनमें से चार शिष्य महाप्रभु वल्लभाचार्य के तथा चार शिष्य विट्ठलनाथ जी के हैं। वल्लभाचार्य जी ने गोवर्धन में श्री नाथजी के मंदिर की स्थापना की थी। इनके पुत्र विट्ठलनाथ जी ने इस मंदिर में आठ पहर सेवा का विधान किया। अष्टछाप कवि कुशल संगीतकार भी थे। ये श्री नाथजी के मंदिर में कृष्ण–लीला के पद रचकर गाया करते थे। मंदिर में सेवा–कीर्तन, भजन–पूजन किया करते थे। डॉ० श्यामसुन्दर दास ने अष्टछाप की महत्ता को रेखांकित करते हुए कहा है– ''अष्टछाप के कवियों में से प्रत्येक ने भक्तिभाव से युक्त कृष्ण की उपासना की और पूरी क्षमता से प्रेम और विरह के सुन्दर गेय पद बनाएं। सबकी वाणी में वह तन्मयता है जो गीतकाव्य के लिए परम उपयोगिनी है। शुद्ध प्रेम

का प्रवाह बहाकर भगवान कृष्ण की स्तुति में आत्मविस्मरण कर देने वाले भक्त कवियों का जो महान ऋण है, उसे हम सभी स्वीकार करेंगे।''[1]

वल्लभाचार्य जी के अनुसार कृष्ण परब्रह्म हैं जो दिव्य गुणों से सम्पन्न होकर 'पुरूषोत्तम' कहलाते हैं। परब्रह्म कृष्ण अपने सत् चित् और आनंद, इन तीनों स्वरूपों का अविर्भाव और तिरोभाव करता रहता है। जड़ में केवल सत् का आविर्भाव रहता है, चित् और आनंद दोनों का तिरोभाव। माया कोई वस्तु नहीं। आनंद का पूर्ण आविर्भाव परब्रह्म पुरूषोत्तम में ही रहता है।

वल्लभाचार्य जी का सिद्धान्त शुद्धाद्वैत के नाम से दर्शन क्षेत्र में प्रसिद्ध है। इनका साधन मार्ग 'पुष्टिमार्ग' नाम से भक्ति क्षेत्र में जाना जाता है। इनका मत है कि 'पुष्टिमार्ग भगवान् के अनुग्रह से ही साध्य है। जीवन यात्रा के सब भावों में लौकिक विषय का त्याग हो और उन भावों के सहित देहादि का भगवान को समर्पण हो वह पुष्टिमार्ग कहलाता है। पुष्टिमार्ग मर्यादा मार्ग से श्रेष्ठ है। ज्ञान और साधन के मार्ग को मर्यादा मार्ग कहा गया है और अनुग्रह का मार्ग पुष्टिमार्ग है। वल्लभाचार्य ने पुष्टि की चार प्रकार प्रवाह पुष्टि, मर्यादा पुष्टि, पुष्टि पुष्टि और शुद्धि पुष्टि बताई है। इनमें सबसे ऊँची श्रेणी की पुष्टि 'शुद्धि पुष्टि' है। इस अनुग्रह में भक्त भगवान की लीलाओं से अपना तादातम्य स्थापित कर लेता है।

अष्टछाप कवियों ने कृष्ण भक्ति तन्मयता से की है। इन्होंने अपना जीवन कृष्ण लीलाओं के गान में समर्पित कर दिया। अष्टछाप कवियों के अतिरिक्त अन्य सम्प्रदायों ने भी कृष्ण भक्ति काव्य के विकास में सक्रिय योगदान दिया। उच्चकोटि के कवि गोस्वामी हितहरि वंश राधा वल्लभी सम्प्रदाय के प्रवर्त्तक हैं। संस्कृत के महान पंडित गदाधर भट्ट का सम्बन्ध गौड़ीय सम्प्रदाय से है। अध्ययन विद्या, कविता व संगीत कला में निपुण स्वामी हरिदास निम्बार्क सम्प्रदाय के अनुयायी थे। रामानुजाचार्य का श्री सम्प्रदाय, माध्य का द्वैतवादी माध्व सम्प्रदाय, रामानन्द जी का विशिष्टाद्वैतवादी रामानन्द सम्प्रदाय तथा हित हरिवंश का हरिदासी सम्प्रदाय महत्वपूर्ण है। इन सबका उद्देश्य कृष्ण भक्ति की स्थापना करना था। ये सभी कृष्ण भक्त कवि रस, आनंद और प्रेम की मूर्ति श्री कृष्ण और राधा–कष्ण की लीलाओं के गान में लीन रहते थे। ये सभी दिन–रात ब्रज रस, कृष्ण रस और राधा रस का पान करते थे।

कृष्ण काव्यधारा में आध्यात्मिक तत्वों का समावेश करने का प्रमुख श्रेय सूरदास को ही दिया जाता है। सूरदास जी ने 'सूरसागर', 'सूरसारावली' और 'साहित्य लहरी' की रचना की। भागवत् के दशम स्कन्ध की कृष्ण कथा श्री वल्लभाचार्य से सुनकर, उससे प्रेरित होकर सूरदास जी ने भाव–विभोर होकर कृष्ण के बाल–रूप और किशोर–जीवन की विविध लीलाओं के पद गाए। सूरदास जी का वात्सल्य वर्णन हिन्दी साहित्य में अद्वितीय है। सूरदास जी ने वात्सल्यभाव का इतना सूक्ष्मता से वर्णन किया है कि उसे देखकर लगता है जैसे सूरदास जी को माता का हृदय प्राप्त हुआ था। ये वात्सल्य भाव के कोने–कोने में झाँक आए हैं। कृष्ण काव्य में वात्सल्य, संख्य एवं माधुर्य भाव की भक्ति का वर्णन हुआ है। कृष्ण काव्य की सभी प्रवृत्तियां इनके काव्य में उपलब्ध होती हैं। अष्टछाप कवियों व विभिन्न सम्प्रदायों के कृष्णभक्त कवियों के आधार पर कृष्ण–काव्यधारा की विशेषताएं निम्नलिखित हैं :–

कृष्ण की लीलाओं का वर्णन

कृष्ण भक्त कवियों के काव्य में कृष्ण लीला–गान की सहज प्रवृत्ति परिलक्षित होती है। कृष्ण लीलाओं में वात्सल्य भाव, संख्यभाव एवं माधुर्य भाव को अभिव्यक्त किया गया है। वात्सल्य भाव

के अन्तर्गत वात्सल्यमयी बाल रूप की लीलाओं का वर्णन किया गया है। संख्य भाव में किशोरावस्था में गोप–गोपिकाओं की क्रीड़ाओं का चित्रण किया गया है। माधुर्यभाव में तरूणावस्था में राधा एवं अन्य गोपियों के साथ माधुर्यमयी रास लीलाओं की प्रमुखता दर्शनीय है। लीला–गान में कवियों की मौलिकता व विविधता से उनकी काव्य–प्रतिभा का पता चलता है। लौकिक बालक रूप में कृष्ण की बाल क्रीड़ाएं सभी को आनंदित व उल्लासित करती हैं। बाल–लीला के अनेक चित्र सूरसागर में चित्रित किए गए हैं यथा :–

''शोभित कर नवनीत लिये
घुटुरुन चलत रेनु तनु मण्डित, मुख दधि लेप किये।
चरु कपोल लोललोचन, गिरोचन तिलक दिये।
लट–लटकानि मनो मत मधुप गन मादक मदहि पिये।
कठुला कंठ व्रज केहरि नख, राजत रूचि रहिये।
धन्य 'सूर' एको पल या सुख का सत कल्प जिये।''[2]

इसी प्रकार अन्यत्र स्थल पर सूरदास जी बालक श्री कृष्ण के चलना सीखने के समय का सजीव चित्र प्रस्तुत करते हैं :–

''कान्ह चलत पग द्वै द्वै धरनी।
जो मन में अभिलाश करत ही सो देखत नंदघरनी।
रूनुक–झुनुक नुपुर बाजत पग, यह अति है मन–हरनी।
बैठ जात पुनि उठत तुरत ही, सो छवि जाय न बरनी।
ब्रज जुवती सब देखि थकित भई, सुन्दरता की सरनी।
चिरंजीवौ जसुदा को नंदन, सूरदास की तरनी।''[3]

सूरदास जी ने बाल कृष्ण की बाल–लीलाओं का मनमोहक, आकर्षक व सरस चित्र बड़ी ही सूक्ष्मता व स्वाभाविकता के साथ प्रस्तुत किया है, वह उनकी मौलिकता का द्योतक है। कृष्ण जन्म, उनका घुटुअन पर चलना, माखन चोरी करना, तुतलाना, अपने आप नाचना, अपने प्रतिबिम्ब को देखकर उसे पकड़ने की कोशिश करना आदि मनोभावों का अपूर्व चित्र सूर जैसा देदीप्यमान साहित्यिक नक्षत्र ही खींच सकता है।

भक्तिभावना

सूरदास जी की भक्तिभावना मेरुदण्ड पुष्टिमार्ग का सिद्धान्त भगवद्नुग्रह है। कृष्ण–काव्य में वात्सल्य, संख्य और माधुर्य भाव की भक्ति प्रमुख है। वात्सल्य भक्ति में कृष्ण की बाल–क्रीड़ाओं के यथार्थ चित्र कृष्ण भक्त कवियों ने प्रस्तुत किए हैं। कृष्ण बाल लीलाओं का वर्णन विश्व साहित्य में दुर्लभ है। माधुर्य भाव की भक्ति में सूर जी ने ब्रज रस का खुलकर पान किया और ब्रजवासियों को आकंठ उस रस से आप्लावित किया। सूर ने गोपियों के माध्यम से माधुर्यभाव की अभिव्यंजना की है। कृष्ण भक्त कवियों ने ऐश्वर्य, विग्रह, क्रीड़ा व वेणु माधुरी का वर्णन किया है। क्रीड़ा माधुरी के अनेक प्रकारों में से गोप लीला श्रेष्ठ है। सूरदास जी ने संख्यभाव की भक्ति को मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि पर विकसित किया है। अपने बाल सखाओं के साथ कृष्ण बड़े आत्मीय व स्वाभाविक संबंध रखते हैं। कृष्ण की अद्भुत लीलाओं से प्रभावित होकर कृष्ण के बाल सखा ग्वाल उनके अलौकिक व्यक्तित्व के प्रति अपनी भक्ति–भावना दर्शाते है। वे ताउम्र कष्ण चरणों में अपने आपको समर्पित कर उनकी

भक्ति में लीन रहना चाहते हैं। कृष्ण भी अपने बाल सखाओं का आदर्श रूप प्रतिष्ठित करते हैं। भक्त भक्ति–भाव में पूर्णतया तन्मयता के साथ भगवान के प्रति अनन्य प्रेम एवं रागात्मक संबंध स्थापित करते हुए सहजभाव से विभिन्न रूपों में भक्ति–भाव को प्रस्तुत करता है। वात्सल्य, संख्य, मधुर भक्ति के साथ–साथ दास्य एवं शांत भाव की भक्ति का प्रतिपादन भी श्री कृष्ण भक्त कवियों की रचनाओं में देखा जा सकता है। वल्लभ सम्प्रदाय में दीक्षित होने से पूर्व सूरदास जी की भक्ति में दास्यभाव देखने को मिलता है। दैन्यपूर्ण पदों में ग्लानि, दीनता, पश्चाताप, निरीहता, संसार के प्रति विरक्ति, आत्मसमर्पण आदि भावों की अभिव्यक्ति दर्शनीय है। सूरदास जी का आत्मनिवेदन अति सुन्दर व सरस है। मीराबाई ने अपने पदों में भावना श्रृंगार के साथ–साथ शांत भाव का भी चित्रण किया है। मीराबाई के बालमन में कृष्ण की ऐसी छवि बसी थी कि यौवनकाल से लेकर मृत्यु तक कृष्ण ही मीरा जीवन का सर्वस्व था। मीराबाई ने भक्ति को नया आयाम दिया। मीरा जी कृष्ण भक्ति की अनूठी मिसाल रही हैं। सूरदास जी के 'सूरसागर' में सभी प्रकार की भक्ति मिलती है। दास्यभक्ति का उदाहरण दृष्टव्य हैः–

''प्रभु हौं सब पतितन को टीकौ
और पतित सब दिवस चारि के, हौ तो जनमत ही कौ।
बधिक अजामिल, गनिका तार्‌यौ और पूतना ही कौ।
मोहि छाँड़ि तुम और उधोर, मिटै सूल क्यों जी कौ?
कोउ न समरथ अघकरिबे कौ, खैंच कहत हौं लीकौ।
मरियत लाज सूर पतितनि में, मोहूँ तै को नीकौ।''[4]

मीरा पदों में भक्तिभाव का उदाहरण दृष्टव्य है :–

''मणथे परस हरि के चरण।
सुभग सीतल कँवल कोमल, जगत ज्वाला हरण।
इन चरण प्रहलाद परस्याँ, इन्द्र पदवी धरण।
इन चरण ध्रुव अटल करस्याँ, सरण असरण सरण।
इन चरण गोबरधन धर्‌याँ गरब मधवा हरण।
दासि मीराँ लाल गिरधर, अगम तारण तरण।''[5]

भक्ति–भावना की महत्ता को चित्रित करते हुए कुंभनदास जी कहते हैं :–

''संतन सो कहा सीकरी सों काम?
आवत जात पनहियाँ टूटी बिसरि गयो हरि नाम।।
जिनको मुख देखे दुख उपजत, तिनको करिबे पूरी सलाम।
कुंभनदास लाल गिरिधर बिनु और सबै बेकाम।''[6]

कृष्ण के लोकरंजक रूप की प्रधानता :

कृष्ण का रसिक रूप, दार्शनिक रूप, कर्मयोगी रूप, दार्शनिक रूप आदि का चरित्र अत्यन्त व्यापक व महान है। तत्पश्चात् भी कृष्ण भक्त कवियों ने इनके मधुर रूप को ही अपनी भक्ति का आलंबन एवं अपनी काव्य रचना का विषय बनाया। इनका मधुर रूप शील और सौंदर्य से समन्वित है, जो लोकरंजक है। कृष्ण कवियों ने कृष्ण के लोकरंजक रूप को प्रधानता देते हुए श्री कृष्ण की

लोकरंजक लीलाओं का ही विस्तृत वर्णन किया है। प्रेम का पूर्ण निर्वाह मर्यादाओं में संभव ही नहीं। इसलिए सूर की गोपियाँ सौन्दर्य के अथाह सागर श्री कृष्ण में आजीवन गोते लगाकर थाह प्राप्त करने का प्रयत्न करती हैं। श्री कृष्ण सौन्दर्य के प्रतीक हैं। सौन्दर्य क्षण–प्रतिक्षण नित्य नवीन होता है। अतः सौन्दर्य की थाह पाना और सौन्दर्य वर्णन दोनों ही आसान नहीं है। सूरदास जी का कहना है :–

''प्रेम प्रेम ते होई, प्रेम ते पारहिं पाइए।
प्रेम बन्ध्यो संसार, प्रेम परमारथ लहिए।।
एकै निश्चय प्रेम को, जीवन मुक्ति रसाल।
सांचौ निश्चय प्रेम को, जहिरै मिलै गोपाल।।''[7]

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जी कहते हैं– समाज किधर जा रहा है, इस बात की परवाह ये नहीं रखते थे, यहाँ तक कि अपने भगवत् प्रेम की दृष्टि के लिये जिस श्रृंगारमयी लोकोत्तर छटा और आत्मोसर्ग की अभिव्यंजना से इन्होंने जनता को रसोन्मत किया, उसका लौकिक स्थूल दृष्टि रखने वाले विषयवासनापूर्ण जीवों पर कैसा प्रभाव पड़ेगा, इसकी ओर भी इन्होंने ध्यान नहीं दिया।

भगवान के सगुण रूप की प्रधानता

कृष्ण भक्त कवियों ने मन, वाणी और कर्म से निर्गुण ईश्वर को अगम्य माना है। अतः ईश्वर के सगुण रूप में कृष्ण भक्ति को ही स्वीकार किया। इन्होंने भगवान के निर्गुण एवं सगुण दोनों रूपों को माना है। परन्तु निर्गुण को अगम्य, अगोचर मानकर ये कृष्ण भक्ति में विश्वास रखते है। इसी कारण इनके काव्य में भगवान के सगुण रूप की प्रधानता है। सूर सगुण भक्ति भाव का प्रतिपादन करते हुए कहते हैं :–

''अविगत–गति कछु कहत न आवै।
ज्यों गूंगे मीठे फल कौरस अन्तरगत ही भावै।
परम स्वाद सबही सु निरन्तर अमित तोश उपजावै।
मन–बानी को अगम–अगोचर, सो जानै जो पावै।
रूप–रेख–गुन–जाति–जुगति–बिनु निरालंब कित धावै।
सब विधि अगम विचारहिं तातें सूर सगुन–लीला पदगावै।''[8]

अनिंद्य सौन्दर्य का चरित्रांकन

कृष्ण के रूप सौन्दर्य का वर्णन कृष्ण भक्त कवियों ने जितनी तन्मयता व आत्मीयता से किया है, वैसा ही इन्होंने राधा के सौन्दर्य का सजीव अंकन किया है। कृष्ण और राधा के सौन्दर्य वर्णन में नर–नारी के चरम–अनिंद्य सौन्दर्य को कृष्ण भक्त कवियों ने अभिव्यक्त किया है। राधा अनिंद्य सुन्दरी थी। नारी–सौन्दर्य पुरूष–मन को अधिक आकर्षित करता है। अतः कृष्ण भी पुरूष–मन से राधा सौन्दर्य के प्रति आकर्षित होते हैं। कृष्ण राधा के अनुचर एवं आज्ञाकारी माने गए हैं। राधावल्लभ सम्प्रदाय में राधा के सौन्दर्य का वर्णन अधिक किया गया है। राधा–कृष्ण के सौन्दर्य पर मुग्ध होकर इन्होंने राधा–कृष्ण के नख–शिख सौन्दर्य का वर्णन बड़ी ही तन्मयता से किया है। श्री कृष्ण के रूप–सौन्दर्य को देखकर गोपियाँ मुग्ध एवं मोहित हो जाती है। कृष्ण के रूप सौन्दर्य के साथ–साथ कृष्ण की मुरली तक में प्रेम भाव के कारण गोपियों को ऐसा सौन्दर्य दिखाई देता है कि अपनी सारी प्रगल्भता उसे कोसने में खर्च कर देती हैं, क्योंकि गोपियों को लगता है कि मुरली; गोपाल को उनसे ज्यादा अच्छी लगती है। कृष्ण पर मुग्ध गोपयाँ बाँसुरी के प्रति ईर्ष्या भाव रखते हुए कहती हैं :–

''मुरली तऊ गोपालहिं भावति।
सुन री सखी! जद्यपि नँदनदहि नाना भाँति नचावति।।
राखति एक पाँय ठाढ़े करि, अति अधिकार जनावति।
आपुनि पौढ़ि अधर सज्जा पर करपल्लव सों पद पलुटावति।।
भ्रुकुटी कुटिल कोप नासापुट हम पर कोपि कँपावति।''[9]

श्री कृष्ण के रूप–सौन्दर्य पर मुग्ध गोपियों का सजीव चित्र प्रस्तुत करते हुए सूरदास जी कहते हैं :–

''श्याम अंग युवती निरखि भुलानी।
कोउ निरखति कुंडल की आभा इतनेहि मोहि बिकानी।।
ललित कपोल निरखि कोउ अटकी शिथिल भई ज्यों पानी।
देह गेह की सुधि नहिं काहू हरशन को पछतानी।।
कोउ निरखति रही ललित नासिका यह काहू नहि जानी।
कोउ निरखति अधरन की सोभा फुरत नहीं मुख बानी।।
कोउ चकुत भई दशन–चमक पर चकचौंधी अकुलानी।
कोउ निरखि द्युति चिबुक चारू की सूर तरूनि बितबानी।।''[10]

राधा के सौन्दर्य का वर्णन करते हुए हितहरिवंश कहते हैं :–

''ब्रजनव तरूनि कदम्ब मुकुट मनि स्यामा आजु बनी।
नख–सिख लो अंग–अंग माधुरी मोहे स्याम धनी।।
यों राजति कबरी गूथित कच कनक कंज वदनी।
चिकुर चन्द्रिकनि बीच अधर विधु मानो ग्रसित फनी।।
सौभग रस सिर स्रवत पनारी पिय सामन्त ठनी।
भ्रकुटि काम–कोदण्ड, नैर शार, कज्जल रेख अनी।।''[11]

कृष्ण उपासिका मीरा भी श्री कृष्ण के सौन्दर्य पर मुग्ध थी। मीरा श्री कृष्ण के अप्रतिम रूप–सौन्दर्य पर मुग्ध होकर कहती हैं :–

''म्हारो प्रणाम बाँके बिहारी जी।
मोर मुकुट माथाँ तिलक बिराज्याँ, कुण्डल, अलकाँ कारी जी।
अधर मधुर धर वंशी बजावाँ, रीझ रिझावाँ, ब्रजनारी जी।
या छब देख्याँ मोह्या मीराँ, मोहण गिरवरधारी जी''[12]

प्रेम की सर्वोपरिता

कृष्ण का सम्पूर्ण चरित्र ही प्रेममय है। अतः कृष्ण काव्य में प्रेम की सर्वोपरिता है। गोपी–उद्धव संवाद में गोपियों की विजय और उद्धव की पराजय इसी सत्य को उद्घाटित करती है कि कृष्ण काव्य में प्रेम व आत्मसमर्पण का महत्व है। कृष्ण भक्त कवियों ने आत्मीयता से कृष्ण, राधा तथा गोपियों के प्रेम को उदात्त भावों के साथ अभिव्यक्त किया है। ये कवि अनन्यभाव से काव्य रचना करते थे, जिससे प्रेमरस इनके काव्य का पर्याय बन गया। सूरदास मदनमोहन राधा–कृष्ण के प्रेम–भाव को चित्रित करते हुए कहते हैं :–

''नवल किसोर नवल नागरिया।
अपनी भुजा स्याम–भुज ऊपर, स्याम–भुजा अपनै उंरधरिया।।
करत विनोद तरनि तनया तट, स्यामा श्याम उमगि रस भरिया।
यौ लपटाइ रहै उर अंतर मरकत मनि कंचन ज्यौ जरिया।।
उपमा को घन दामिनी नाहीं, कँदरप कोटि वारने करिया।
सूर मदन मोहन बलि जोरी नँदनंदन वृषभानु दुलरिया''[13]

सूरदास जी राधा–कृष्ण का एक–दूसरे के प्रति आकर्षण व प्रेम भाव चित्रित करते हुए कहते हैं :–

''चितै राधा रति–नागर ओर।
नैन–बदन–छबि यौ उपचति, मनु ससि अनुराग चकोर।
सारस रस अँचवन कौं मानौं, फिरत मधुप जुग जोर।
पान करत कहुँ तृप्ति न मानत, पलकनि देत अकोर।
लियौ मनोरथ मानि सफल ज्यौं रजनि गये पुनि भोर।
'सूर' परस्पर प्रीति निरन्तर दम्पति हैं चित चोर।''[14]

कवि रसखान को श्रीकृष्ण से इतना अधिक प्रेम है कि वे कृष्ण की ब्रजभूमि में ही निवास करना चाहते है। उनका अगला जन्म किसी भी रूप में हो, बस हो ब्रजभूमि में। ब्रजभूमि के प्रति अपना प्रेम प्रकट करते हुए रसखान जी कहते हैं :–

''मानुष हौं तो वही 'रसखानि' बसौ ब्रज गोकुल गाँव के ग्वारन।
जो पशु हौं तो कहा बस मेरो, चरौं नित नंद की धेनु मँझारन।
पाहन हौं तो वही गिरि को जो धर्‌यो कर छत्र पुरंदर धारन।
जो खग हौं तो बसेरो करो नित कालिंदी कूल कदंब की डारन।।''[15]

श्री कृष्ण की प्रेमाधीनता का वर्णन

भगवान श्री कृष्ण भक्त वत्सल है। इन्हें प्राप्त करने के लिए किसी विधि–विधान, आडम्बर या अध्ययन की आवश्यकता नहीं है। जब भी हम उन्हें सच्चे हृदय से याद करते हैं, तब–तब वे हमारे पास होते हैं। श्री कृष्ण अपने भक्तों को अत्यधिक प्यार करते है, इसलिए वे उनके अक्षम्य अपराधों को भी उन्हें याद करते ही माफ कर देते हैं। इतना ही नहीं यदि भक्त उनसे नाराज होकर दूर चला जाता है तो श्री कृष्ण विरह से व्याकुल होकर उनके आगे–पीछे दौड़ने लग जाते हैं। श्री कृष्ण के उदार व कृपालु स्वभाव पर प्रकाश डालते हुए सूरदास जी कहते हैं :–

''प्रभु को देखौ एक सुभाइ।
अति गम्भीर–उदार–उदधि हरि, जान–सिरोमनि राइ।
तिनका सौं अपने जनकौ गुन मानत मेरू समान।
सकुचि गनत अपराध–समुद्रहिं–तुल्य भगवान।
वदन–प्रसन्न–कमल सनमुख है देखत हौं हरि जैसें।
विमुख भये अकृपा निमिश हूँ, फिरि चितयौ तो तैसें।
भक्त–विरह–कातर करूणामय, डोलत पाछै लागे।

सूरदास ऐसे स्वामी कौं देहिं पीठि सो अभागे।''[16]

कृष्ण भक्त कवि रसखान जी भगवान बाह्याडंबरों के नहीं प्रेम के वशीभूत हैं, इसी सत्य को चित्रित करते हुए कहते हैं :–

''ब्रह्म में ढूँढ्यो पुरानन गानन वेद रिचा सुनि चौ गुने चायन।
देख्यो सुन्यो कबहूँ न कितूँ वह कैसे सरूप औ कैसे सुभायन।।
टेरत हेरत हारि पर्‌यो रसखानि बतायो न लोग लुगायन।
देखौ दुरो वह कुंजकुटीर मैं बैठो पलोटत राधिका पायन।।''[17]

वात्सल्य वर्णन

इसमें कोई अतिश्योक्ति नहीं कि सूर ही वात्सल्य है और वात्सल्य ही सूर है। पुष्टि मार्ग से दीक्षा प्राप्त करने के कारण इनके काव्य में वात्सल्य को अधिक महत्व दिया गया है। 'सूरसागर' में कृष्ण के जन्मोत्सव, संस्कार, उनकी बाल छवि, उनकी वेशभूषा, बाल चेष्टाओं, गोधन, गोचारण तथा बालकृष्ण के मनोभावों का बड़ा ही सजीव, मनोहारी, हृदयस्पर्शी वर्णन किया है। बाललीला के पदों में तो मानो वात्सल्य रस का सागर उमड़ने लगता है। प्रस्तुत पद में सूर जी ने भगवान श्री कृष्ण की बाल सुलभ लीला व माता यशोदा की अभिलाशा का सुन्दर चित्रण प्रस्तुत किया है। यथा :

''किलकत कान्ह घुटरूवन आवत।
मनिमय कनक नंद के आँगन, मुख प्रतिबिंब पकरिबे धावत।
कबहुँ निरखि हरि आप छाँह को, पकरन को चित चाहत।
किलकि हँसत राजत द्वै दँतियाँ, पुनि–पुनि तिहि अवगाहत।
कनक भूमि पर कर पग छाया, यह उपमा एक राजत।
प्रतिकर प्रति–पद प्रतिमनि वसुधा, कमल बैठकी साजत।
बाल–दसा–सुख निरखि जसोदा, पुनि–पुनि नंद बुलावति।
अँचरा तर लै ढाँकि 'सूर' के प्रभु कौं दूध पियावति।''[18]

श्रृंगार वर्णन

सूरदास जी श्रृंगार के सम्राट कहे जाते हैं। सूर ने श्रृंगार के संयोग व वियोग दोनों पक्षों का सुन्दर वर्णन किया है। राधा और कृष्ण के मिलन का सूर ने बड़ा ही मनोहारी चित्र प्रस्तुत किया है। यथाः

''बूझत स्याम कौन तू गोरी।
कहाँ रहति, काकी है बेटी, देखी नहीं कबहुँ ब्रज–खोरी।।
काहै को हम ब्रज–तन आवति, खेलती रहती आपनी पौरी।
सुनत रहति स्त्रवननि नंद ढोटा, करत फिरत माखन–दधि चोरी।।
तुम्हरौ कहा चौरी हम लेहौं, खेलन चलौ संग मिलि जोरी।
सूरदास प्रभु रसिक सिरोमनि, बातनि भुरइ राधिका भोरो।।''[19]

कृष्ण, राधा और गोपियों की परस्पर प्रीति प्रकट है उनके हृदय के विविध भावों को संयोग–वियोग अवस्था में अभिव्यक्त किया गया है। यहीं श्रृंगार रस है। श्री कृष्ण के मिलन–प्रसंग में रास–लीला, मानलीला आदि प्रसंगों में मुखर, चंचल, चपल गोपियाँ विभिन्न आनंद केलियों का

संपादन करने वाली हैं तो भ्रमरगीत की गोपियाँ विरह–वेदना से व्याकुल है। श्री कृष्ण के मथुरा चले जाने के बाद वे अत्यन्त दुखी हैं। इनका अवसाद उद्धव आने के बाद तो और भी अधिक बढ़ जाता है। सूर ने विरह–वेदना का इतना सजीव चित्रण प्रस्तुत किया है कि हृदय की घनीभूत पीड़ा आँसुओं की शत–शत धाराओं में प्रकट होकर लहरें मार रही है। विरह वेदना वर्णन में सूर की समता करने वाला कोई कवि नहीं है। सूर विप्रलम्ब श्रृंगार के अद्वितीय कवि है। 'भ्रमरगीत : विरहचित्र' शीर्षक पद में सूर जी का विरह व्यथा का सजीव चित्रण देखा जा सकता है :–

''बिनु गोपाल बैरिन भई कुंजैं।
तब ये लता लगती अति शीतल अब भई विषमज्वाल की पुंजैं।
वृथा बहति जमुना, खग बोलत, वृथा कमल फूले अलि गुंजै।
पवन पानि घनसार संजीवनी दधिसुत किरन भानु भई भुंजैं।
ए, ऊद्यो, कहियो माधव सों, मदन मारि कीन्हीं हम लुंजैं।
सूरदास प्रभु को मग जोवत अँखियाँ भई वरन ज्यों गुंजै।।''[20]

संयोगकाल में सुखद अनुभव कराने वाले प्राकृतिक उपादान श्री कृष्ण अभाव में दुखदायी प्रतीत हो रहे है। गोपियाँ श्री कृष्ण के प्रवास चले जाने से व्यथित है। अतः वियोगास्था के कारण इन्हें यह सब विषम दिखाई दे रहा है।

भ्रमरगीत का वर्णन

प्रायः सभी कृष्ण भक्त कवियों ने भ्रमरगीत गाए है। विरह–विदग्धा गोपियाँ उद्धव पर अपना गुस्सा उतारने के लिए एक भवरें (भौंरे) को सम्बोधित कर अपने मन के भाव को प्रकट करती हैं। गोपियाँ भ्रमर आश्रय से कृष्ण व कृष्ण के सन्देशवाहक उद्धव को खरी–खोटी सुनाती हैं। यथा–

''सुनहु मधुप। एकै मन सबको सो तो वहाँ लै छाए हौ।
मधुबन की मानिनी मनोहर तहँहि जाहु जहुँ भाए हौ।
अब यह कौन सयानप? ब्रज पर का करन उठिधाए हौ।
सूर जहाँ लौ श्यामगात है जानि भले करि पाए हो।।''[21]

प्रकृति वर्णन

कृष्ण प्रकृति की गोद में खेले हैं। उनका व्यक्तित्व प्रकृति की गोद में विकसित होता है। बाल–लीलाओं से लेकर लोकमंगलकारी कार्यों में प्रकृति प्रधान रही है। यमुना, कदम्ब, करील, लता, चन्द्रमा आदि राधा–कृष्ण के मिलन के साक्षी हैं। कृष्ण भक्त कवियों ने प्रकृति के मुग्धकारी चित्र प्रस्तुत करते हुए उद्दीपन और आलंकारिक रूपों का विशेष चित्रण किया है। कृष्ण–काव्य में प्रकृति के अंतः और बाह्य दोनों रूप दर्शनीय हैं। प्रकृति के कोमल एवं भयंकर दोनों रूप इनके काव्य में विद्यमान हैं। यथा :

''देखयत कालिन्दी अतिकारी।
कहियो पथिक जाए उन्हीं सो भई विरह जुर जारी।
सूरदास प्रभु जो जमुना गति सो गति भई हमारी।।''[22]

सूरदास जी का प्रकृति वर्णन आलम्बन रूप में न होकर उद्दीपन रूप में हुआ है। सूर का प्रकृति के कोमल रूप के प्रति अधिक आकर्षण था, इसलिए प्रकृति का कोमल रूप इनकी रचनाओं में अभिव्यक्त हुआ है। यथा :–

''बिनु गोपाल बैरिन भई कुंजैं।
तब ये लता लगति अति शीतल,
अब भई विषम ज्वाल की पुंजैं।।''[23]

ब्रज संस्कृति का सजीव चित्रण

कृष्ण की बाल्यावस्था व किशोरवस्था ब्रजभूमि में व्यतीत हुई थी। इसी कारण से कृष्ण भक्त कवियों ने अपने काव्य में ब्रज प्रदेश की संस्कृति का सजीव चित्रण प्रस्तुत किया है। ब्रजगीत, रीति–रिवाज, आचार, परम्पराएँ, संस्कार, लोकाचार, आस्था–विश्वास, धर्म, व्रत–त्योहार, टोने–टोटके आदि का यर्थाथ चित्रण कृष्ण काव्य में हुआ है। कृष्ण जीवन के साथ–साथ ब्रज की परम्पराओं व विशेषताओं को भी कृष्ण कवियों ने अपने काव्य में समेटकर बड़े ही आकर्षक व मनोहारी चित्र प्रस्तुत किए हैं :–

''या लकुटी अरु कामरिया पर राज तिहूँ पुर को तजि डारौं।
आठहुँ सिद्धि नवो निधि को सुख नंद की गाइ चराइ बिसारौं।।
रसखानि कबौं इन आँखिन सों ब्रज के बन बाग तड़ाग निहारौं।
कोटिक रौ कलधौत के धाम करील के कुंजन ऊपर वारौं।।''[24]

गीति काव्य

सभी कवि संगीत विद्या में निपुण थे। अष्टछाप कवि संगीत में निपुण और मधुर पद गाने वाले थे। इसलिए कृष्णपरक गीतिकाव्य में अवसरानुकूल सभी रागों व तालों के नाम दिए गए हैं। गोविन्द स्वामी से तानसेन संगीत सीखने आते थे, अकबर वेश बदलकर सूर के गान को सुनने आते थे और कुंभनदास विशेष आग्रह पर सीकरी संगीत आयोजन में भाग लेने जाते थे। इससे स्पष्ट है कि सम्पूर्ण कृष्ण भक्ति काव्य संगीत की पृष्ठभूमि में विकसित हुआ है। कृष्ण–काव्य में राग–रागनियों का सुन्दर संयोजन है। आज भी सूर, मीरा, हितहरिवंश, हरिदास भक्त कवियों के पदों में संगीत की अपूर्व छटा से श्रोता मंत्रमुग्ध हो जाते हैं।

काव्य रूप

अधिकांशतयः कृष्ण काव्य मुक्तक शैली में रचित है। यद्यपि कुछ प्रबंधकाव्यों की रचना भी हुई है लेकिन सूरदास, मीरा, नंददास आदि के मुक्तको के समक्ष वे नहीं ठहर पाते। कृष्ण भक्त कवियों ने कृष्ण के प्रति अपने प्रेम व भक्ति को गीतिरूप में प्रकट किया है। इनकी रचनाएँ सरल भावपूर्ण हृदय के उद्‌गार हैं। जब ये पद गाते हैं तब लोकसंगीत से लोकहृदय एकाकार हो जाता है। कृष्ण कवियों ने कृष्ण जीवन व कृष्ण जीवन से संबंधित सभी पक्षों के रसिक रूप को ग्रहण कर मुक्तक शैली को अपनाया।

रस योजना

कृष्ण भक्त कवियों की रचनाओं में मूल रस भक्ति है। इस रस का पर्यवसान वात्सल्य, श्रृंगार और शान्त रस में हो गया है। वात्सल्य रस वर्णन में सूर का कोई सानी नहीं है। लगता है इनको माता हृदय प्राप्त था। श्रृंगार के संयोग व वियोग दोनों पक्षों का चित्रण किया गया है। परन्तु वियोग वर्णन संयोग की अपेक्षा अत्यधिक उत्कृष्ट है। शान्त रस योजना भी अद्वितीय है।

कला पक्ष

कृष्ण भक्त कवियों ने ब्रज भाषा का प्रयोग कर कृष्ण काव्य के साहित्यिक रूप में चार–चाँद लगा दिए हैं। सूर की भाषा की शक्ति 'भ्रमरगीत' में देख सकते हैं। बाल लीला–प्रेम लीला में सरल

व स्वाभाविक ब्रजभाषा का प्रयोग ब्रजभाषा की शक्ति को बढ़ाता है। कृष्ण भक्त कवियों का अलंकार विधान चमत्कार–प्रदर्शन के लिए न होकर हृदय के भावों को अभिव्यक्त करने का अनिवार्य माध्यम है। इन कवियों ने सौन्दर्य–बोध के लिए अलंकारों का प्रयोग किया है। कृष्ण काव्य में उत्प्रेक्षा, उपमा, अतिश्योक्ति, अन्योक्ति आदि अलंकारों का प्रचुर प्रयोग हुआ है। शब्दालंकारों में अनुप्रास, यमक, वीप्सा, श्लेष, वक्रोक्ति का प्रयोग किया गया है। कृष्ण कवियों ने प्रमुख रुप से पद छन्द का प्रयोग किया है। इसके अतिरिक्त दोहा–चौपाई, कवित्त–सवैया, दोहा–रोला, छप्पय, कुंडलिया, हरिगीतिका, गीतिका, अरिल्ल आदि छन्द भी दृष्टिगोचर होते हैं।

सारांश यह है कि भारतीय धर्म साधना, संस्कृति, साहित्य तथा कलायें कृष्ण के विलक्षण व्यक्तित्व से अत्यधिक प्रभावित है। कृष्ण का विलक्षण व्यक्तित्व समाज का पथ प्रशस्त करता है। कृष्णभक्ति साहित्य आनन्द और उल्लास का साहित्य है। यह परवर्ती कवियों के लिए प्रेरणास्त्रोत रहा है। हिन्दी साहित्य में कृष्ण भक्ति काव्य अपनी भाव प्रवणता एवं काव्य सौष्ठव के कारण विशेष पहचान रखता है। कृष्णोपासक भक्त कवियों ने प्रेममाधुर्य का जो सुधास्त्रोत बहाया है उसके प्रभाव से हमारे काव्य क्षेत्र में सरसता और प्रफुल्लता बराबर बनी रहेगी।

सन्दर्भ

1 टण्डन, डॉ० पूरन चन्द., कुमारी, डॉ० विनीता. 'हिन्दी साहित्य का इतिहास'. जगतराम एण्ड संसः नयी दिल्ली. पृष्ठ **171.**
2 पाण्डेय, डॉ० रामसजन. 'मध्यकालीन काव्य कुंज'. खाटू श्याम प्रकाशन. पृष्ठ ....
3 पाण्डेय, डॉ० रामसजन. 'मध्यकालीन काव्य कुंज'. खाटू श्याम प्रकाशन. पृष्ठ **43.**
4 पाण्डेय, डॉ० रामसजन. 'मध्यकालीन काव्य कुंज'. खाटू श्याम प्रकाशन. पृष्ठ **40.**
5 पाण्डेय, डॉ० रामसजन. 'मध्यकालीन काव्य कुंज'. खाटू श्याम प्रकाशन. पृष्ठ **68.**
6 शुक्ल, रामचन्द्र. 'हिन्दी साहित्य का इतिहास'. नागरी प्रचारिणी सभाः काशी पृष्ठ **122.**
7 शर्मा, डॉ० शिवकुमार. 'हिन्दी साहित्य युग और प्रवृतियाँ'. अशोक प्रकाशनः नई सड़क दिल्ली–6. पृष्ठ **291.**
8 पाण्डेय, डॉ० रामसजन. 'मध्यकालीन काव्य कुंज'. खाटू श्याम प्रकाशन. पृष्ठ **39.**
9 शुक्ल, रामचन्द्र. 'हिन्दी साहित्य का इतिहास'. नागरी प्रचारिणी सभाः काशी. पृष्ठ **119.**
10 टण्डन, डॉ० पूरन चन्द., कुमारी, डॉ० विनीता. 'हिन्दी साहित्य का इतिहास'. जगतराम एण्ड संस, नयी दिल्ली. पृष्ठ **177.**
11 टण्डन, डॉ० पूरन चन्द., कुमारी, डॉ० विनीता. 'हिन्दी साहित्य का इतिहास'. जगतराम एण्ड संसः नयी दिल्ली. पृष्ठ **177.**
12 पाण्डेय, डॉ० रामसजन. 'मध्यकालीन काव्य कुंज'. खाटू श्याम प्रकाशन. पृष्ठ **68.**
13 शुक्ल, रामचन्द्र. 'हिन्दी साहित्य का इतिहास'. नागरी प्रचारिणी सभाः काशी. पृष्ठ **129.**
14 पाण्डेय, डॉ० रामसजन. 'मध्यकालीन काव्य कुंज'. खाटू श्याम प्रकाशन. पृष्ठ **46.**
15 पाण्डेय, डॉ० रामसजन. 'मध्यकालीन काव्य कुंज'. खाटू श्याम प्रकाशन. पृष्ठ **81.**
16 पाण्डेय, डॉ० रामसजन. 'मध्यकालीन काव्य कुंज'. खाटू श्याम प्रकाशन. पृष्ठ **39.**
17 पाण्डेय, डॉ० रामसजन. 'मध्यकालीन काव्य कुंज'. खाटू श्याम प्रकाशन. पृष्ठ **83.**

18 पाण्डेय, डॉ० रामसजन. 'मध्यकालीन काव्य कुंज'. खाटू श्याम प्रकाशन. पृष्ठ **43.**
19 पाण्डेय, डॉ० रामसजन. 'मध्यकालीन काव्य कुंज'. खाटू श्याम प्रकाशन. पृष्ठ ....
20 पाण्डेय, डॉ० रामसजन. 'मध्यकालीन काव्य कुंज'. खाटू श्याम प्रकाशन. पृष्ठ **49.**
21 पाण्डेय, डॉ० रामसजन. 'मध्यकालीन काव्य कुंज'. खाटू श्याम प्रकाशन. पृष्ठ **47.**
22 'विरह पदावली' : सूरदास 'राग सारंग, गीता प्रेस, गोरखपुर, पृष्ठ **97.**
23 पाण्डेय, डॉ० रामसजन. 'मध्यकालीन काव्य कुंज'. खाटू श्याम प्रकाशन. पृष्ठ **49.**
24 पाण्डेय, डॉ० रामसजन. 'मध्यकालीन काव्य कुंज'. खाटू श्याम प्रकाशन. पृष्ठ **81.**